सप्त - स्वरों से अतीत,
सुन रहा हूँ संगीत।
मनो वीणा का तार,
तुन - तुन ध्वनित अपार।।७७।।

अमूर्त के आकाश में,
विलीन ज्यों प्रकाश में।
प्रकाश नाश विकास में,
सत् चिन्मय विलास में।।७८।।

आलोक की इक किरण,
पर्याप्त चलते चरण।
पथिक! सुदूर भले ही,
गन्तव्य पर मिले ही।।७९।।

आसीन सहज मानस,
तट पर यह मम मानस।
हंस सानन्द क्रीड़ा,
कर रहा भूल पीड़ा।।८०।।

विगत सब विस्मरण में,
अनागत कब मरण में -
ढल चुका, विदित नहिं है,
स्व - संवेदन बस यही है।।८१।।

विमल समकित विहंगम,
दृश्य का हुआ संगम।
नयनों से हृदयंगम,
किया मम मन विहंगम।।८२।।

समकित सुमन की महक,
गुण - विहंगम की चहक।
मिली, साम्य उपवन में,
नहिं! नहिं! नन्दन वन में।।८३।।

भय नहीं विषय - विष से,
नहिं प्रीति पीयूष से।
अजर अमर अविनाशी,
हूँ चूँकि ध्रुव विकासी।।८४।।

हर सत् में अवगाहित,
हूँ प्रतिष्ठित अबाधित।
समर्पित सम्मिलित हूँ,
हूँ तभी शुचि मुदित हूँ।।८५।।

ज्ञात तथ्य सत्य हुआ,
जीवन कृत्कृत्य हुआ।
हुआ आनन्द अपार,
हुआ वसन्त संचार।।८६।।

फलतः परितः प्लावित,
पुलकित पुष्पित फुल्लित।
मृदु शुचि चेतन - लतिका,
गा रही गुण - गीतिका।।८७।।

जलद की कुछ पीलिमा,
मिश्रित सघन नीलिमा।
चीर, तरुण अरुण भाँति,
बोध - रवि मिटा भ्रान्ति।।८८।।

हुआ जब से वह उदित,
खिली लहलहा प्रमुदित।
सचेतना सरोजिनी,
मोदिनी मनमोहिनी।।८९।।

उद्योत इन्दु प्रभु सिन्धु,
खद्योत मैं लघु बिन्दु।
तुम जानते सकल को,
मैं स्व-पर के शकल को।।९०।।

मैं. पराश्रित, निजाश्रित,
तुम हो, पै तुम आश्रित -
हो, यह रहस्य सूँघा,
सम्प्रति अवश्य गूंगा।।९१।।

प्रकृति से ही रही प्रकृति
भोग्या जड़मती कृति।
भोक्ता पुरुष सनात,
नव - नवीन अधुनातन।।९२।।

पुरुष पुरुष से न प्रभावित,
हुआ, प्रकृति से बाधित।
हुआ, पुरुषार्थ वंचित,
विवेक रखे न किंचित्।।६३।।

रहा प्रकृति से सुमेल,
रखता, खेलता खेल।
स्वभाव से दूर रहा,
विभाव से पूर रहा।।६४।।

सुधाकर सम सदा से,
पूरित बोध - सुधा से।
होकर भी राग केतू,
भरित है चित् सुधा से तू।।६५।।

उस ओर मौन तोड़ा,
विवाद से मन जोड़ा।
पुरुष नहीं बोलेंगे,
मौन नहीं खोलेंगे।।६६।।

प्रमाद की इन तानें -
बानें सुन सम ताने।
मौन मुझे जब लखकर,
चिड़कर खुलकर मुड़कर।।६७।।

प्रेम क्षेत्र में अब तक,
चला किन्तु यह कब तक।
मेरे साथ ए नाथ!
होगा विश्वासघात।।६८।।

समता से मम ममता,
जब से तन क्षमता।
अनन्त ज्वलन्त प्रकटी,
प्रमाद - प्रमदा पलटी।।६९।।

कुछ - कुछ रिपुता रखती,
रहती मुझको लखती।
अरुचिकर दृष्टि ऐसी,
प्रेमी आप ! प्रेयसी।।१००।।

मुझ पर हुआ पविपात,
कि आपद माथ, गात।
विकल पीड़ित दिन - रात,
चेतन जड़ एक साथ।।१०१।।

अब चिरकाल अकेली,
पुरुष के साथ केली।
पिलापिला अमृतधार,
मिलामिला सस्मित प्यार।।
करूँगी खुश करूँगी,
उन्हें जीवित नित लखूँगी।।१०२।।

दोहा स्तुति शतक

दोहा स्तुति शतक

मंगलाचरण

शुद्ध भाव से नमन हो, शुद्धभाव के काज।
स्मरों, स्मरूं नित थुति करूं उरमें करूं विराज।।
अगार गुण के गुरु रहे, अगुरु गन्ध अनगार।
पार पहुँचने नित नमूँ, प्रणाम बारम्बार।।
नमूँ भारती भ्रम मिटे, ब्रह्म बनूँ मैं बाल।
भार रहित भारत बने, भास्वत भारत भाल।।

श्री आदिनाथ भगवान

आदिम तीर्थकर प्रभु, आदिनाथ मुनिनाथ।
आधि व्याधि अघ मद मिटे तुम पद में मममाथ।।
वृष का होता अर्थ है, दयामयी शुभ धर्म।
वृष से तुम भरपूर हो, वृष से मिटते कर्म।।
दीनों के दुर्दिन मिटे तुम दिनकर को देख।
सोया जीवन जागता, मिटता अघ अविवेक।।
शरण चरण है आपके, तारण तरण जहाज।
भव दधि तट तक ले चलो करुणाकर जिनराज।।

श्री अजितनाथ भगवान

हार जीत के हो परे, हो अपने में आप।
बिहार करते अजित हो, यथा नाम गुण छाप।।
पुण्य पुंज हो पर नहीं, पुण्य फलों में लीन।
पर पर पामर भ्रमित हो, पल पल पर आधीन।।
जित इन्द्रिय जित मद बनें जितभव विजित कषाय।
अजितनाथ को नित नमूँ, अर्जित दुरित पलाय।।
कोंपल पल पल को पलें, वन में ऋतु पति आय।
पुलकित मम जीवन लता, मन में जिनपद पाय।।

श्री संभवनाथ भगवान

भव-भव भव-वन भ्रमित हो, भ्रमता-भ्रमता आज।
संभव जिनभव शिव मिले, पूर्ण हुआ मम काज।।
क्षण क्षण मिटते द्रव्य हैं, पर्यय वश अविराम।
चिर से है चिर ये रहे, स्वभाव वश अभिराम।।
परमार्थ का कथन यूं, कथन किया स्वयमेव।
यतिपन पाले यतन से, नियमित यति हो देव।।
तुम पद पंकज से प्रभु, झर झर झरी पराग।
जब तक शिव सुख ना मिले, पीऊं षटपद जाग।।

श्री अभिनन्दन नाथ भगवान

गुण का अभिनन्दन करो, करो कर्म की हानि।
गुरु कहते गुण गौण हो, किस विध सुख हो प्राणि।।
चेतन वश तन, शिव बने, शिव बिन तन शव होय।
शिव की पूजा बुध करें, जड़ तन शव पर रोय।।
विषयों को विष लख तजूं, बनकर विषयातीत।
विषय बना ऋषि ईश को, गाऊँ उनका गीत।।
गुणधारें पर मद नहीं, मृदुतम हो नवनीत।
अभिनन्दन जिन ! नित नमूँ मुनि बन मैं भवभीत।।

श्री सुमतिनाथ भगवान

बचूँ अहित से हित करूँ, पर न लगा हित हाथ।
अहित साथ, ना छोड़ता, कष्ट सहूँ दिन-रात।।
बिगड़ी धरती सुधरती, मति से मिलता स्वर्ग।
चारों गतियाँ बिगड़ती, पा अघ मति संसर्ग।।
सुमतिनाथ प्रभु सुमति हो, मम मति है अतिमंद।
बोध कली खुल खिल उठे, महक उठे मकरन्द।
तुम जिन मेघ मयूर मैं, गरजो बरसो नाथ।
चिर प्रतीक्षित हूँ खड़ा, ऊपर करके माथ।।

श्री पद्मप्रभ भगवान

निरीछटा ले तुम छटे, तीर्थकरों में आप।
निवास लक्ष्मी के बने, रहित पाप संताप।।
हीरा मोती पद्म ना, चाहूँ तुमसे नाथ।
तुम सा तम-तामस मिटा, सुखमय बनूँ प्रभात।।
शुभ्र सरल तुम बाल, तव कुटिल कृष्ण तम नाग।
तव चिति चित्रित ज्ञेय से, किंतु न उसमें दाग।।
विराग पद्मप्रभु आपके, दोनों पाद सराग।
रागी मम मन जा वहीं, पीता तभी पराग।।

श्री सुपार्श्वनाथ भगवान

यथा सुधा कर खुद सुधा, बरसाता बिन स्वार्थ।
धर्मामृत बरसा दिया, मिटा जगत का आर्त।।
दाता देते दान हैं, बदले की ना चाह।
चाह दाह से दूर हो, बड़े बड़ों की राह।।
अबंध भाते काट के, वसु विधि विधि का बंध।
सुपार्श्व प्रभु निज प्रभुपना, पा पाये आनन्द।।
बांध-बांध विधि बन्ध मैं, अन्ध बना मतिमन्द।
ऐसा बल दो अंध को, बन्धन तोडूं द्वन्द।।

श्री चन्द्रप्रभु भगवान

सहन कहाँ तक अब करूँ, मोह मारता डंक।
दे दो इसको शरण ज्यों, माता सुत को अंक।।
कौन पूजता मूल्य क्या, शून्य रहा बिन अंक।
आप अंक है शून्य मैं, प्राण फूक दो शंख।।
चन्द्र कलंकित किंतु हो, चन्द्रप्रभु अकलंक।
वह तो शंकित केतु से, शंकर तुम निशंक।।
रंक बना हूँ मम अतः, मेटे मन का पंक।
जाप जपूँ जिन नाम का, बैठ सदा पर्यक।।

श्री पुष्पदन्त भगवान

सुविधि सुविधि के पूर हो, विधि से हो अति दूर।
मम मन से मत दूर हो, विनती हो मन्जूर।।
किस वन की मूली रहा, मैं तुम गगन विशाल।
दरिया में खसखस रहा, दरिया मौन निहार।।
फिर किस विध निरखूँ तुम्हें, नयन करूँ विस्फार।
नाचूँ गाँऊ ताल दूँ, किस भाषा में ढाल।।
बाल मात्र भी ज्ञान ना, मुझमें मैं मुनि बाल।
बवाल भव का मम मिटे, तुम पद में मम भाल।।

श्री शीतलनाथ भगवान

चिन्ता छूती कब तुम्हें, चिंतन से भी दूर।
अधिगम में गहरे गये, अव्यय सुख के पूर।।
युगों-युगों से युग बना, विघन अघों का गेह।
युग दृष्टा युग में रहें, पर ना अघ से नेह।।
शीतल चंदन है नहीं, शीतल हिम ना नीर।
शीतल जिनतव मत रहा, शीतल हरता पीर।।
सुचिर काल से मैं रहा, मोह नींद से सुप्त।
मुझे जगाकर, कर कृपा, प्रभो करो परितृप्त।।

श्री श्रेयांसनाथ भगवान

रागद्वेष और मोह ये, होते करण तीन।
तीन लोक में भ्रमित यह, दीन हीन अघ लीन।।
निज क्या, पर क्या, स्व-पर क्या, भला बुरा बिन बोध।
जिजीविषा ले खोजता, सुख ढोता तन बोझ।।
अनेकान्त की कान्ति से, हटा तिमिर एकान्त।
नितान्त हर्षित कर दिया, क्लान्त विश्व को शान्त।।
निःश्रेयस सुखधाम हो, हे जिनवर! श्रेयांस।
तव थुति अविरल मैं करूँ, जब लौ घट में श्वाँस।।

वासुपूज्य भगवान

औ न दया बिन धर्म ना, कर्म कटे बिन धर्म।
धर्म मर्म तुम समझकर,करलो अपना कर्म।।
वासुपूज्य जिनदेव ने, देकर यूं उपदेश।
सबको उपकृत कर दिया, शिव में किया प्रवेश।।
वसुविध मंगल द्रव्य ले, जिन पूजो सागार।
पाप घटे फलतः फले, पावन पुण्य अपार।।
बिना द्रव्य शुचि भाव से, जिन पूजो मुनि लोग।
बिन निज शुभ उपयोग के शुद्ध न हो उपयोग।।

श्री विमलनाथ भगवान

काया कारा में पला, प्रभु तो कारातीत।
चिर से धारा में पड़ा, जिनवर धारातीत।।
कराल काला व्याल सम, कुटिल चाल का काल।
विष विरहित उसका किया, किया स्वप्न साकार।।
मोह अमल बस समल बन, निर्बल मैं भयवान।
विमलनाथ तुम अमल हो, सम्बल दो भगवान।।
ज्ञान छोर तुम मैं रहा, ना समझ की छोर।
छोर पकड़कर झट इसे, खींचो अपनी ओर।।

श्री अनन्तनाथ भगवान

आदि रहित सब द्रव्य है, ना हो इनका अन्त।
गिनती इनकी अन्त से, रहित अनन्त अनन्त।।
कर्त्ता इनका पर नहीं, ये न किसी के कर्म।
सन्त बने अरिहन्त हो, जाना पदार्थ धर्म।
अनन्त गुण पा कर दिया, अनन्तभव का अन्त।
अनन्त सार्थक नाम तव, अनन्त जिन जयवन्त।।
अनन्त सुख पाने सदा, भव से हो भयवन्त।
अन्तिम क्षण तक मैं तुम्हें, स्मरूं स्मरें सब संत।।

श्री धर्मनाथ भगवान

जिससे बिछुड़े जुड सकें, रुदन रुके मुस्कान।
तन गत चेतन दिख सके, वही धर्म सुखखान।।
विरागता में राग हों, राग नाग विष त्याग।
अमृत पान चिर कर सकें, धर्म यही झट जाग।।
दयाधर्म वर धर्म है, अदया भाव अधर्म।
अधर्म तज प्रभु धर्म ने, समझाया पुनि धर्म।।
धर्मनाथ को नित नमूँ, सधे शीघ्र शिव शर्म।
धर्म-मर्म को लख सकूँ, मिटे मलिन मम कर्म।।

श्री शान्तिनाथ भगवान

सकलज्ञान से सकल को, जान रहे जगदीश।
विकल रहे जड़ देह से, विमल नमूँ नतशीश।।
कामदेव हो काम से, रखते कुछ ना काम।
काम रहे ना कामना, तभी बने सब काम।।
बिना कहे कुछ आपने, प्रथम किया कर्त्तव्य।
त्रिभुवन पूजित आप्त हो, प्राप्त किया प्राप्तव्य।।
शान्ति नाथ हो शान्त कर, सातासाता सान्त।
केवल-केवल-ज्योतिमय, क्लान्ति मिटी सब ध्वांत।।

श्री कुंथुनाथ भगवान

ध्यान अग्नि से नष्ट कर, प्रथम पाप परिताप।
कुथुंनाथ पुरुषार्थ से, बने न अपने आप।।
उपादान की योग्यता, घट में ढलती सार।
कुम्भकार का हाथ हो, निमित्त का उपकार।।
दीन दयाल प्रभु रहे, करुणा के अवतार।
नाथ अनाथों के रहे, तार सको तो तार।।
ऐसी मुझपैं हो कृपा, मम मन मुझ में आय।
जिस विध पल में लवण है, जल में घुल मिल जाए।।

श्री अरहनाथ भगवान

चक्री हो पर चक्र के, चक्कर में ना आय।
मुमुक्षु पन जब जागता, बुभुक्षु पन भग जाय।।
भोगों का कब अन्त है, रोग भोग से होय।
शोक रोग में हो अतः काल योग का रोय।।
नाम मात्र भी नहिं रखो, नाम काम से काम।
ललाम आतम में करो, विराम आठों याम।।
नाम धरो 'अर' नाम तव, अतः स्मरूं अविराम।
अनाम बन शिवधाम में, काम बनूं कृत-काम।।

श्री मल्लिनाथ भगवान

क्षार क्षार भर है भरा, रहित सार संसार।
मोह उदय से लग रहा, सरस सार संसार।।
बने दिगम्बर प्रभु तभी, अन्तरंग बहिरंग।
गहरी-गहरी हो नदी, उठती नहीं तरंग।।
मोह मल्ल को मार कर, मल्लिनाथ जिनदेव।
अक्षय बनकर पा लिया, अक्षय सुख स्वयमेव।।
बाल ब्रह्मचारी विभो, बाल समान विराग।
किसी वस्तु से राग ना, तुम पद से मम राग।।

श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान

निज में यति ही नियति है, ध्येय "पुरुष" पुरुषार्थ।
नियति और पुरुषार्थ का, सुन लो अर्थ यथार्थ।।
लौकिक सुख पाने कभी, श्रमण बनो मत भ्रात।
मिले धान्य जब कृषि करे, घास आप मिल जात'।।
मुनिबन मुनिपन में निरत, हो मुनि यति बिन स्वार्थ।
मुनि व्रत का उपदेश दे, हमको किया कृतार्थ।।
मात्र भावना मम रही, मुनिव्रत पाल यथार्थ।
मैं भी मुनिसुव्रत बनूं, पावन पाय पदार्थ।।

श्री नमिनाथ भगवान

मात्र नग्नता को नहिं, माना प्रभु शिव पंथ।
बिना नग्नता भी नहीं, पावो पद अरहन्त।।
प्रथम हटे छिलका तभी, लाली हटती भ्रात।
पाक कार्य फिर सफल हो, लो तव मुख में भात।
अनेकान्त का दास हो, अनेकान्त की सेव।
करूँ गहूँ मैं शीघ्र से, अनेक गुण स्वयंमेव।।
अनाथ मैं जगनाथ हो, नमीनाथ दो साथ।
तव पद में दिन रात हूँ, हाथ जोड़ नत-माथ।।

श्री नेमिनाथ भगवान

राज तजा राजुल तजी, श्याम तजा बलिराम।
नाम धाम धन मन तजा, ग्राम तजा संग्राम।।
मुनि बन वन में तप सजा, मन पर लगा लगाम।
ललाम परमातम भजा, निज में किया विराम।।
नील गगन में अधर हो, शोभित निज में लीन।
नील कमल आसीन हो, नीलम से अति नील।।
शील-झील में तैरते, नेमि जिनेश सलील।
शील डोर मुझे बांध दो, डोर करो मत ढील।।

श्री पार्श्वनाथ भगवान

रिपुता की सीमा रही, गहन किया उपसर्ग।
समता की सीमा यही, ग्रहण किया अपवर्ग।।
क्या क्यों किस विध कब कहें, आत्म ध्यान की बात।
पल में मिटती चिर बसी, मोह अमा की रात।।
खास-दास की आस बस, श्वास-श्वास पर वास।
पार्श्व करो मत दास को, उदासता का दास।।
ना तो सुर-सुख चाहता, शिव सुख की ना चाह।
तव थुति सरवर में सदा, होवे मम अवगाह।।

श्री महावीर भगवान

क्षीर रहा प्रभु नीर मैं, विनती करूँ अखीर।
नीर मिला लो क्षीर में, और बना दो क्षीर।।
अबीर हो, तुम वीर भी, धरते ज्ञान शरीर।
सौरभ मुझ में भी भरो, सुरभित करो समीर।।
नीर निधि से धीर हो, वीर बनें गंभीर।
पूर्ण तैर कर पा लिया, भवसागर का तीर।।
अधीर हूँ मुझ धीर दो, सहन करूँ सब पीर।
चीर चीर कर चिर लखूँ, अन्दर की तस्वीर।।

रचना एवम् स्थान परिचय

"बीना बारह क्षेत्र पे सुनो! नदी सुख चैन।
बहती बहती कह रही, इत आ सुख दिन रैन।।
श्याम राम माल रस गंध की वीर जयन्ती पर्व।
पूर्ण हुआ थुति शतक है, पढ़े सुनें हम सर्व।।

"श्याम नारायण ६ राम १ रस ५ गंध २ यानी ६१५२ अंकानाम वामतो गति के अनुसार वीर निर्माण संवत् २५१६ विक्रम संवत् २०५० शक संवत् १६१५ चैत्र सुदी त्रयोदशी महावीर जयन्ती दिवस पर सुखचैन नदी के समीपवर्ती श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र बीना बारहा देवरी सागर म प्र में ४ अप्रेल १६६३ ईश्वी, रविवार के दिन दिगम्बर जैनाचार्य सन्तशिरोमणि श्री विद्यासागर मुनि महाराज के द्वारा यह "स्तुति शतक " अपर नाम "दोहा थुति शतक " पूर्ण हुआ।

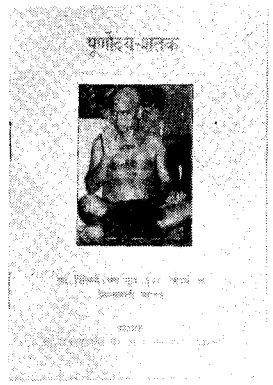

पूर्णोदय शतक

पूर्णोदय शतक

बिन तन बिन मन वचन बिन,
बिना करण बिन वर्ण।
गुण गण गुम्फन घन नमूँ,
शिवगण को बिन स्वर्ण ।।१।।

पाणि-पात्र के पाद में,
पल-पल हो प्रणिपात।
पाप खपा, पा, पार को,
पावन पाऊँ प्रान्त ।।२।।

शत-शत सुर-नर-पति करें,
वंदन शत-शत बार।
जिन बनने जिन-चरण रज,
लूँ मैं शिर पर सार।।३।।

सुर-नर-यति-पति पूजते,
सुध-बुध सभी बिसार।
गुरु गौतम गुणधर नमूँ,
उमंग से उर धार ।।४।।

नमूँ भारती तारती,
उतारती उस तीर।
सुधी उतारें आरती,
हरती खलती-पीर।।५।।

तरणि ज्ञानसागर गुरो!
तारो मुझे ऋषीश।
करुणाकर करुणा करो,
कर से दो आशीश ।।६।।

कौरव रव-रव में गये,
पाण्डव क्यों शिव-धाम।
स्वार्थ तथा परमार्थ का,
और कौन परिणाम?।।७।।

पारसमणि के परस से,
लोह हेम बन जाय।
पारस के तो दरस से,
मोह क्षेम बन जाय।।८।।

एक साथ लो! बैल दो,
मिल कर खाते घास।
लोकतन्त्र पा क्यों लड़ो?
क्यों आपस में त्रास ।।९।।

दिखा रोशनी रोष ना,
शत्रु, मित्र बन जाय।
भावों का बस खेल है,
शूल, फूल बन जाय।।१०।।

उच्च-कुलों में जन्म ले,
नदी निम्नगा होय।
शांति, पतित को भी मिले,
भाव बड़ों का होय ।।११।।

सूर्योदय से मात्र ना,
ऊष्मा मिले प्रकाश।
सूर दास तक को मिले,
दिशा-बोध अविनाश।।१२।।

मानव का कलकल नहीं,
कल-कल नदी निनाद।
पंछी का कलरव रुचे,
मानव! तज उन्माद।।१३।।

भू पर निगले नीर में,
ना मेंढक को नाग।
निज में रह बाहर गया,
कर्म दबाते जाग ।।१४।।

कब तक कितना पूछ ना,
चलते चल अविराम।
रुको रुको यूँ सफलता,
आप कहे यह धाम।।१५।।

जिनवर आँखें अध-खुलीं,
जिन में झलके लोक।
आप दिखे सब, देख ना!
स्वस्थ रहे उपयोग ।।१६।।

ऊधम से तो दम मिटे,
उद्यम से दम आय।
बनो दमी हो आदमी
कदम-कदम जम जाय।। १७।।

दोष रहित आचरण से,
चरण-पूज्य बन जाय।
चरण-धूल तक शिर चढ़े
मरण-पूज्य बन जाय।।१८।।

तन से मन से वचनसे,
चेतन में अब डूब।
डूबा अब तक खूब है,
तन से अब तो ऊब।।१९।।

एक साथ सब कर्म का,
उदय कभी ना होय।
बूँद-बूँद कर बरसते,
घन, वरना सब खोय।।२०।।

नदी बदलती पथ नहीं,
जब तक मिले अनन्त।
मानव पथ क्यों बदलता,
बनकर भी हे सन्त !।।२१।।

आत्मामृत तज विषय में,
रमता क्यों यह लोक?
खून चूसता दुग्ध तज,
गो थन में क्यों जोंक।।२२।।

मदन मान का मूल मन,
मूल मिटा प्रभु आप।
मदन जयी, जित मान हो,
पावन अपने आप।।२३।।

देह गेह का नेह तज,
आतम हो अनुभूत।
स्नेह जले दीपक तभी,
करे उजाला पूत।।२४।।

ज्ञान तथा वैराग्य ये,
शिव-पथ-साधक दोय।
खड्ग ढाल ले भूप ज्यों,
श्री यश धारक होय।।२५।।

नाम बने परिणाम तो,
प्रमाण बनता मान।
उपसर्गो से क्यों डरा?
पार्श्व बने भगवान।।२६।।

प्रभु चरणों में हार कर,
शस्त्र डाल कर काम।
विनीत हो पूजक बना,
झुक, झुक करे प्रणाम ।।२७।।

तभी शूल सब फूल हो,
पूजन साधन सार।
सत्-संगति का फल मिले,
भव-सागर का पार।।२८।।

काया का कायल नहीं,
काया में हूँ आज।
कैसे - काया कल्प हो,
ऐसा कर तप - काज।।२९।।

छुप - छुपकर क्यों छापते,
निश्छल छवि पर छाप।
ताप - पाप संताप के,
रूप उघड़ते आप।।३०।।

पेटी भर ना पेट भर,
खेती कर, नाऽऽ खेट।
लोकतन्त्र में लोक का,
संग्रह हो भरपेट।।३१।।

नम्र बनो मानी नहीं,
जीवन वर ना मौत।
वेत बनो ना वट बनों
फिर सुर-शिव-सुख का स्त्रोत ।।३२।।

अलख जगा कर देख ले,
विलख, विलख मत हार।
निरख, निरख निज को जरा,
हरख, हरख इस बार।।३३।।

चल, चल जिस पर विभु हुये,
चल, चल तू उस पन्थ।
चल, चल वरना बीच से,
चल चल होगा सन्त!।।३४।।

वश में हों सब इन्द्रियाँ,
मन पर लगे लगाम।
वेग बढ़े निर्वेग का,
दूर नहीं फिर धाम ।।३५।।

फड़ - फड़ - फड़ - फड़ बन्द कर,
पक्ष-पात के पाँख।
सुदूर खुद में उतर आ,
एक - बार तो झाँक।।३६।।

शील, नसीले द्रव्य के,
सेवन से नश जाय।
संत - शास्त्र – संगति करे,
और शील कस जाय।।३७।।

जठरानल अनुसार हो,
भोजन का परिणाम।
भावों के अनुसार ही,
कर्म - बन्ध - फल् - काम ।।३८।।

नस नस मानस - रस नसे,
नसे, मोह का वंश।
लसे हृदय में बस भले,
जिनोपासना अंश।।३९।।

यम - संयम - दम - नियम ले,
कर आगम अभ्यास।
उदास जग से, दास बन –
प्रभु का सो संन्यास।।४०।।

गुरु-चरणों की शरण में,
प्रभु पर हो विश्वास।
अक्षय - सुख के विषय में,
संशय का हो नाश।।४१।।

स्वयं तिरे, ना तारती –
कभी अकेली नाव।
पूजा नाविक की करो,
बने पूज्य तब नाव।।४२।।

नहीं व्यक्ति को पकड़ तू,
वस्तु - धर्म को जान।
मान तथा बहुमान दे,
विराटता का गान।।४३।।

वर्ण - लाभ वरदान है,
संकर से हो दूर।
नीर - दूध में ले मिला,
आक - दूध ना भूल ।।४४।।

गगन चूमते शिखर हैं,
भू-स्पर्शी क्यों द्वार?
बता जिनालय ये रहे,
नत बन, मत मद धार।।४५।।

सार सार का ग्रहण हो,
असार को फटकार।
नहीं चालनी तुम बनो,
करो सूप-सत्कार।।४६।।

नयन – नीर लख नयन में,
आता यदि ना नीर।
नीर पोंछना पूछना,
उपरिल उपरिल पीर ।।४७।।

बड़े बड़े ना पाप हों,
बड़ी बड़ी ना भूल।
चमड़ी दमड़ी के लिए,
पगड़ी पर क्यों धूल?।।४८।।

एक तरफ से मित्रता,
सही नहीं वह मित्र।
अनल पवन का मित्र ना,
पवन अनल का मित्र।।४६।।

विगत अनागत आज का,
हो सकता श्रद्धान।
शुद्धातम का ध्यान तो,
घर में कभी न मान ।।५०।।

मात्रा मौलिक कब रही,
गुणवत्ता अनमोल।
जितना बढ़ता ढोल हैं,
उतना बढ़ता पोल।।५१।।

चाव – भाव से धर्म कर,
उज्ज्वल कर ले भाल।
माल नहीं पर-भाव से,
बन तू मालामाल।।५२।।

मोही जड़ से भ्रमित हो,
ज्ञानी तो भ्रम खोय।
नीर उष्ण हो अनल से,
कहाँ उष्ण हिम होय।।५३।।

सागर का जल तप रहा,
मेघ-बरसते नीर।
बह बह वह सागर मिले,
यही नीर की पीर।।५४।।

न्यायालय में न्याय ना,
न्यायशास्त्र में न्याय।।
झूँठ छूटता, सत्य पर
टूट पड़े अन्याय।।५५।।

सीमा तक तो सहन हो,
अब तो सीमा पार।
पाप दे रहा दण्ड है,
पड़े पुण्य पर मार।।५६।।

सौ सौ कुम्हड़े लटकते,
बेल भली बारीक।
भार नहीं अनुभूत हो,
भले संघ गुरु ठीक।।५७।।

जिसके स्वामीपन रहे,
नहीं लगे वह भार।
निजी काय भी भार क्या?
लगता कभी कभार।।५८।।

कर्तापन की गन्ध बिन,
सदा करे कर्त्तव्य।
स्वामीपन ऊपर धरे,
ध्रुव - पर हो मन्तव्य।।५९।।

सन्तों के आगमन से,
सुख का रह न पार।
सन्तों का जब गमन हो,
लगता जगत असार।।६०।।

सुन, सुन गुरु उपदेश को ,
बुन बुन मत अघजाल।
कुन कुन कर परिणाम तू,
पुनि पुनि पुण्य सँभाल।।६१।।

निर्धनता वरदान है,
अधिक धनिकता पाप।
सत्य तथ्य की खोज में,
निर्गुणता अभिशाप।।६२।।

नीर नीर है क्षीर ना,
क्षीर क्षीर ना नीर।
चीर चीर है जीव ना,
जीव जीव, ना चीर ।।६३।।

कर पर कर धर करणि कर,
कल कल मत कर और
वरना कितना कर चुका
कर मरना ना छोर ।।६४।।

यान करे बहरे इधर,
उधर यान में शान्त।
कोरा कोलाहल यहाँ,
भीतर तो एकान्त।।६५।।

सूरज दूरज हो भले,
भरी गगन में धूल।
सर में पर नीरज खिले,
धीरज हो भरपूर।।६६।।

बान्धव रिपू को सम गिनो,
संतों की यह बात।
फूल चुभन क्या ज्ञात है?
शूल चुभन तो ज्ञात।६७।।

क्षेत्र काल के विषय में,
आगे पीछे और
ऊपर नीचे ध्यान दूँ,
ओर दिखे ना छोर।।६८।।

स्वर्ण - पात्र में सिंहनी,
दुग्ध टिके नान्यत्र।
विनय पात्र में शेष भी,
गुण टिकते एकत्र।।६९।।

परसन से तो राग हो,
हर्षण से हो दाग।
घर्षण से तो आग हो,
दर्शन से हो जाग।।७०।।

माँग सका शिव माँग ले,
भाग सका चिर भाग।
त्याग सका अघ - त्याग ले,
जाग सका चिर जाग।।७१।।

साधुसन्त कृत शास्त्र का,
सदा करो स्वाध्याय।
ध्येय, मोह का प्रलय हो,
ख्याति लाभ व्यवसाय।।७२।।

आप अधर मैं भी अधर,
आप स्व-वश हो देव।
मुझे अधर में लो उठा,
परवश हूँ दुर्दैव।।७३।।

मंगल में दंगल बने,
पाप कर्म दे साथ।
जंगल में मंगल बने,
पुण्योदय में भ्रात!।।७४।।

धोओ मन को धो सको ,
तन को धोना व्यर्थ।
खोओ गुण में खो सको,
धन में खोना व्यर्थ।।७५।।

त्रिभुवन जेता काम भी,
दोनों घुटने टेक।
शीश झुकाते दिख रहा,
जिन - चरणों में देख।।७६।।

तोल तुला मैं अतुल हूँ
पूरण वर्तुल - व्यास।
जमा रहूँ बस केन्द्र में,
बिना किसी आयास।।७७।।

व्यास बिना वह केन्द्र ना,
केन्द्र बिना ना व्यास।
परिधि तथा उस केन्द्र का,
नाता जोड़े व्यास।।७८।।

केन्द्र रहा सो द्रव्य है,
और रहा गुण व्यास।
परिधि रही पर्याय है,
तीनों में व्यत्यास।।७९।।

व्यास केन्द्र या परिधि को,
बना यथोचित केन्द्र।
बिना हठाग्रह निरख तू,
निज में यथा जिनेन्द्र ।।८०।।

वृषभ चिंह को देखकर,
स्मरण वृषभ का होय।
वृषभ-हानि को देख कर,
कृषक-धर्म अब रोय।।८१।।

काला पड़ता जा रहा,
भारत का गुरु भाल।
भारी बढ़ता जा रहा,
भारत का ऋण भार।।७२।।

वर्णो का दर्शन नहीं,
वर्णो तक ही वर्ण।
चार वर्ण के थान पर,
इन्द्र - धनुष से वर्ण।।८३।।

वर्ण - लाभ से मुख्य है,
स्वर्ण-लाभ ही आज।
प्राण बचाने जा रहे,
मनुज बेच कर लाज।।८४।।

विषम पित्त का फल रहा,
मुख का कडुवा स्वाद।
विषम वित्त से चित्त में,
बढ़ता है उन्माद।।७५।।

कानों से तो हो सुना,
आँखों देखा हाल।
फिर भी मुख से ना कहे,
सज्जन की यह ढाल ।।७६।।

दीप कहाँ दिनकर कहाँ,
इन्दु कहाँ खद्योत।
कूप कहाँ सागर कहाँ,
यह तोता प्रभु पोत।।८७।।

धर्म - धनिकता में सदा,
देश रहे बल जोर।
भवन वही बस चिर टिके,
नींव नहीं कमजोर।।८८।।

बाल गले में पहुँचते,
स्वर का होता भंग।
बाल, गेल में पहुँचते,
पथ-दूषित हो संघ।।७६।।

बाधक शिव - पथ में नहीं,
पुण्य - कर्म का बन्ध।
पुण्य - बन्ध के साथ भी.
शिव पथ बढे अमन्द।।६०।।

पुण्य-कर्म अनुभाग को,
नहीं घटाता भव्य।
मोह-कर्म की निर्जरा,
करता है कर्त्तव्य ।।६१।।

तभी मनोरथ पूर्ण हो,
मनोयोग थम जाय।
विद्यारथ पर रूढ हो,
तीन - लोक नम जाय।।६२।।

हुआ पतन बहुबार है,
पा कर के उत्थान।
वही सही उत्थान है,
हो न पतन सम्मान।।६३।।

सौरभ के विस्तार हो,
नीरस ना रस कूप।
नमूँ तुम्हें तुम तम हरो,
रूप दिखाओ धूप।।६४।।

नहीं सर्वथा व्यर्थ है,
गिरना भी परमार्थ।
देख गिरे को, हम जगें,
सही करें पुरुषार्थ ।।६५।।

गगन गहनता गुम गई,
सागर का गहराव।
हिला हिमालय दिल विभो!
देख सही ठहराव।।६६।।

निरखा प्रभु को, लग रहा,
बिखरा सा अघ-राज।
हलका सा अब लग रहा,
झलका सा कुछ आज।।९८।।

ईश दूर पर मैं सुखी,
आस्था लिए अभंग।
ससूत्र बालक खुश रहे,
नभ में उड़े पतंग।।९८।।

हृदय मिला पर सदय ना,
अदय बना चिर-काल।
अदया का अब विलय हो,
चाहूँ दीन दयाल!।।९९।।

चेतन में ना भार है,
चेतन की ना छाँव।
चेतन की फिर हार क्यों?
भाव हुआ दुर्भाव।।१००।।

चिन्ता ना परलोक की,
लौकिकता से दूर।
लोक हितैषी बस बनूँ,
सदा लोक से पूर।।१०१।।

स्थान एवं समय-संकेत

रामटेक में, योग से,
दूजा वर्षायोग।
शान्तिनाथ की छाँव में,
शोक मिटे, अघ रोग।।१०२।

गगन[1] - गन्ध - गति गौत्र का,
भादों – पूनम् – योग ।।
"पूर्णोदय" पूरण हुआ,
पूर्ण करे उपयोग ।।१०३।।

१ संतशिरोमणी दिगम्बर जैनाचार्य श्री विद्यासागर मुनि महाराज के द्वारा श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र रामटेक (नागपुर) महाराष्ट्र में द्वितीय बार के वर्षायोग काल में गगन, गन्ध २ गति ५ गोत्र २ अंकानां बामतो गति के अनुसार वीर निर्वाण संवत २५२० विक्रम संवत् २०५१ की भाद्रपद शुक्ल पूर्णिमा, सोमवार, १६ सितम्बर १९९४ को यह 'पूर्णोदय शतक' पूर्ण हुआ।

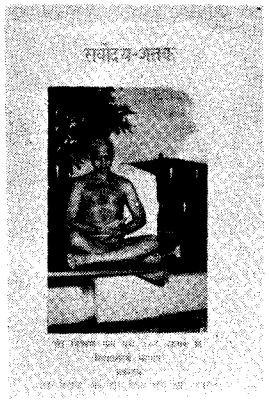

सर्वोदय शतक

सर्वोदय शतक

कल्प - वृक्ष से अर्थ क्या?
कामधेनु भी व्यर्थ।
चिन्तामणि को भूल अब,
सन्मति मिले समर्थ।।१।।

तीर उतारो, तार दो,
त्राता! तारक वीर।
तत्त्व - तंत्र हो तथ्य हो,
देव, देवतरु धीर।।२।।

पूज्यपाद गुरु पाद में,
प्रणाम हो सौभाग्य।
पाप ताप संताप घट,
और बढ़े वैराग्य।।३।।

भार रहित मुझ, भारती!
कर दो सहित सुभाल।
कौन सँभाले माँ बिना,
ओ माँ! यह है बाल।।४।।

सर्वोदय इस शतक का,
मात्र रहा उद्देश।
देश तथा पर देश भी,
बने समुन्नत देश।।५।।

पंक नहीं पंकज बनूँ,
मुक्ता बनूँ न सीप।
दीप बनूँ जलता रहूँ,
प्रभु-पद-पद्म-समीप।।६।।

प्रमाण का आकार ना,
प्रमाण में आकार।
प्रकाश का आकार ना,
प्रकाश में आकार।।७।।

एक नजर तो मोहिनी,
जिससे निखिल अशान्त।
एक नजर तो डाल दो,
प्रभु! अब सब हो शान्त।।८।।

भास्वत मुख का दरस हो,
शाश्वत सुख की आस।
दासक-दुख का नाश हो,
पूरी है अभिलाष।।६।।

दृष्टि मिली पर कब बनूँ
द्रष्टा सब का धाम।
सृष्टि मिली पर कब बनूँ
सृष्टा निज का राम।।१०।।

गुण ही गुण , पर में सदा,
खोजूँ निज में दाग।
दाग मिटे बिन गुण कहाँ,
तामस मिटते, राग!।।११।।

सुने वचन कटु पर कहाँ,
श्रमणों को व्यवधान।
मस्त चाल से गज चले,
रहें भोंकते श्वान।।१२।।

मत डर, मत डर मरण से,
मरण मोक्ष - सोपान।
मत डर, मत डर चरण से,
चरण मोक्ष सुख - पान।।१३।।

सागर का जल क्षार क्यों,
सरिता मीठी सार।
बिन श्रम संग्रह अरुचि है,
रुचिकर श्रम उपकार।।१४।।

देख सामने चल अरे,
दीख रहे अवधूत।
पीछे मुड़कर देखता,
उसको दिखता भूत।।१५।।

पद पंखों को साफ कर,
मक्खी उड़ती बाद।
सर्व - संग तज ध्यान में,
डूबो तुम आबाध।।१६।।